Porf. Anju Chaudhary

Education :
M.A. Drawing & Painting, English, B.ed. NET, Ph.D.

Activities :
- Active Participation in many National and International Seminars, Conferences, workshops and Exhibitions
- 30 Research papers are Published in Different Journals of National and international regonitions & 16 Chepter Published in Various Books.
- U.G.C. Teacher Fellowship - 2004-05 & 2005-06
- Organized many National and International Seminars, Conferences & Workshops
- Worked as subject expert in many states in - Different activities

Publication of the books -
- Fundamental of Visual Arts
- Samkalin Navtantric Kala Evam Iske Pramkh Kalakar.
- Surrealistic Trends in Modern Indian Milleu
- Youth -20 India Energing issues challenges and way forward
- Mahakavya Kaleen Bharat
- Relevance of Ancient Indian art in Present era
- ASEAN- Indian youth and socio-cultural connectivity
- Yoga for Physical, Mental & Spiritual Growth

Awards -
- Kala Gaurav Samman - 2017
- Best Research Paper award C S J M U - 2023
- Gu n Gaurav Samman - 2025

Designation -
Principal, Mahila Mahavidhyalaya, P.G. College, Kidwai Nagar, Kanpur

Address -
70, Saraswati Vihar, Phase-I, Rohata Road, Meerut

Also available at : Flipkart amazon

विकास प्रकाशन, कानपुर
311 सी, विश्वबैंक बर्रा, कानपुर-208027
शोरूम : 110/138 मिश्रा पैलेस, जवाहर नगर, कानपुर-12
मोबाइल : 9415154156, 9450057852
E-mail : vikasprakashankanpur@gmail.com
vikasprakashanknp@gmail.com
Website : www.vikasprakashan.com

ISBN 978-93-47390-15-9
9 789347 390159 >
₹ 650.00

भारतीय ज्ञान परम्परा
स्वर्णिम अतीत और उज्ज्वल भविष्य
सम्पादक
प्रो. अंजू चौधरी
सह-सम्पादक
डॉ. शताक्षी चौधरी
डॉ. नूर फ़ातिमा अंसारी

भारतीय ज्ञान परम्परा

स्वर्णिम अतीत और उज्ज्वल भविष्य

सम्पादक
प्रो. अंजू चौधरी

सह-सम्पादक
डॉ. शताक्षी चौधरी
डॉ. नूर फ़ातिमा अंसारी

भारतीय ज्ञान परम्परा

स्वर्णिम अतीत और उज्ज्वल भविष्य

सम्पादक
प्रो. अंजू चौधरी
सह-सम्पादक
डॉ. शताक्षी चौधरी
डॉ. नूर फ़ातिमा अंसारी

विकास प्रकाशन, कानपुर

मूल्य : छह सौ पचास रुपये मात्र

पुस्तक	:	भारतीय ज्ञान परम्परा : स्वर्णिम अतीत और उज्ज्वल भविष्य
सम्पादक	:	प्रो. अंजू चौधरी
सह-सम्पादक	:	डॉ. शताक्षी चौधरी, डॉ. नूर फ़ातिमा अंसारी
प्रकाशक	:	**विकास प्रकाशन** 311 सी., विश्व बैंक, बर्रा, कानपुर- 208027
संस्करण	:	प्रथम मार्च 2026 ई.
आवरण-सज्जा	:	छपाईघर, ब्रह्मनगर, कानपुर
शब्द-सज्जा	:	शुभी कम्प्यूटर, कानपुर
मुद्रक	:	छपाईघर, कानपुर
मूल्य	:	650/-
I S B N	:	978-93-47390-15-9

अनुक्रम

1.	भारतीय ज्ञान प्रणाली एवं प्राचीन संस्कारों में अंतर्संबंध **प्रो. ममता गंगवार, प्रतिभा कटियार**	19
2.	सौंदर्यशास्त्र की भारतीय ज्ञान मीमांसा **डॉ. शताक्षी चौधरी**	30
3.	भारतीय ज्ञान परम्परा में कौटिल्य के आर्थिक विचार व उनकी वर्तमान में प्रासंगिकता **डॉ. नविता एस. कुमार, डॉ. मनोज कुमार सिवाच**	35
4.	भारतीय ज्ञान परंपरा और हमारी लोक कलाएँ **अर्चना गर्ग**	43
5.	आधुनिक शिक्षा में भारतीय ज्ञान-परंपरा के एकीकरण की चुनौतियाँ **डॉ. रश्मि सिंह**	50
6.	भारतीय ज्ञान प्रणाली में ताल वाद्य एक अध्ययन **डॉ. खुशबू**	55
7.	भारतीय ज्ञान परंपरा में महिला साहित्यकारों का योगदान (गीतांजलि श्री के विशेष संदर्भ में) **हिमांशी यादव, प्रो. ज्योति किरण**	62
8.	भारतीय ज्ञान प्रणाली (प्राचीन एवं आधुनिक काल) में कला की सहभागिता **प्रो. वन्दना शर्मा, कल्पना चौधरी**	68
9.	भारतीय ज्ञान परम्परा के संदर्भ में पारम्परिक कला और आधुनिक सौन्दर्यबोध **डॉ. एकता बिष्ट**	74
10.	भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का दार्शनिक आधार **अभिषेक सिंह**	82

2

सौंदर्यशास्त्र की भारतीय ज्ञान मीमांसा

डॉ. शताक्षी चौधरी
असि. प्रो. चित्रकला विभाग
रानी भाग्यवती देवी महिला महाविद्यालय
बिजनौर (उ.प्र.)

भारतीय सौंदर्यशास्त्र की ज्ञान मीमांसा कला और सौंदर्य के अनुभव को आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दृष्टि से समझने का प्रयास है। भारतीय परंपरा में सौंदर्य को केवल बाह्य रूप या दृश्य आकर्षण तक सीमित नहीं माना गया, बल्कि उसे अनुभूति और चेतना से जोड़ा गया है। 'रस सिद्धांत' भारतीय सौंदर्य चिंतन का मूल आधार है, जिसके अनुसार कला का उद्देश्य दर्शक या सहृदय में रस की अनुभूति कराना है। यह अनुभूति लौकिक भावनाओं से ऊपर उठकर अलौकिक आनंद की स्थिति प्रदान करती है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में रस, भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भावों की व्याख्या के माध्यम से सौंदर्य के ज्ञानात्मक पक्ष को स्पष्ट किया गया है। अभिनव गुप्त ने रस को ब्रह्मानंद सहोदर बताते हुए इसे आत्मानुभूति से जोड़ा। भारतीय ज्ञान मीमांसा में सौंदर्य अनुभव को प्रत्यक्ष, अनुमान और अनुभूति के समन्वय से समझा जाता है, जिसमें सहृदय की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार भारतीय सौंदर्यशास्त्र की ज्ञान मीमांसा कला को केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि आत्मिक उन्नयन और ज्ञान प्राप्ति का साधन मानती है, जो भारतीय चिंतन की विशिष्ट पहचान है।

मुख्य शब्द-

सौंदर्य, सौंदर्यशास्त्र, रस सिद्धांत, चिंतन, अनुभूति, अभिव्यक्ति, आध्यात्मिकता।

भारतीय ज्ञान परम्परा विश्व की प्राचीनतम और सर्वाधिक, समग्र, चिन्तन परम्पराओं में से एक है। इस परम्परा में सौंदर्यशास्त्र (Aesthetic) केवल कला या रूप-सौंदर्य का विषय नहीं, बल्कि अस्तित्व, अनुभूति, अर्थ और आनन्द इन सभी के

अंतर-संबंधों की दार्शनिक खोज है जो मनुष्य को सत्यम्, शिवम्, और सुन्दरम् से जोड़ती है। सौन्दर्यशास्त्र दर्शन की एक शाखा है, जिसके तहत कला, साहित्य और सुन्दरता से सम्बन्धित प्रश्नों का विवेचन किया जाता है। भारतीय चिंतन में सौंदर्य का आधार अनुभूति, आध्यात्मिक चेतना और सांस्कृतिक संवेदना है। यही कारण है कि सौंदर्य की व्याख्या इन्द्रिय सुख से आगे बढ़कर आत्मानुभूति तक पहुँचती है। भारतीय सौंदर्य-मीमांसा का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि यहाँ कला को धर्म, नीति और सत्य से अलग नहीं माना गया। कला जीवन का अंग है और उसका सौंदर्य लोक संग्रह, लोकहित तथा आध्यात्मिक उन्नति से जुड़ा हुआ है। इस कारण सौंदर्य का ज्ञान केवल बुद्धि पर केन्द्रित नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक संवेदनाओं से संचालित होता है। भारतीय सौंदर्य मीमांसा वस्तु के बाह्य रूप से अधिक उसके आन्तरिक रस, अनुभूति, गुण और आध्यात्मिक प्रभाव पर केन्द्रित है। यही कारण है कि भारतीय सौंदर्य चिन्तन केवल चित्रकला, संगीत, नृत्य या साहित्य तक सीमित नहीं, बल्कि वह जीवन, धर्म, दर्शन, ज्ञान, योग तथा आध्यात्मिक साधना से गहराई से जुड़ा हुआ है।

सौंदर्य का अनुभव व्यापक और महत्वपूर्ण है। इससे हृदय सरस और जीवन उर्वर होता है, बुद्धि को नवीन चेतना और कल्पना को सजीवता प्राप्त होती है। इस महत्वपूर्ण अनुभूति का अनुशीलन करने, उसके स्वरूप और स्वभाव को समझने, जीवन की दूसरी अनुभूतियों के साथ इसका संबंध स्पष्ट करने तथा इसकी पुष्ट और रचनात्मक शक्ति को समझने के लिए जिससे कला का जन्म होता है। हमें एक विशेष विचार माला की आवश्यकता होती है और इसी व्यवस्थित विचार माला को हम सौंदर्यशास्त्र कहते हैं।[1] सौंदर्यशास्त्र वह शास्त्र है, जिसमें कलात्मक कृतियों, रचनाओं आदि से अभिव्यक्त होने वाला अथवा उसमें निहित रहने वाले सौंदर्य का तात्विक और मार्मिक विवेचन होता है। यह सौंदर्यपरक मूल्यों पर विमर्श है, जो विशेषतः रस की प्रसमीक्षा से अभिव्यंजित होता है।[2] किसी वस्तु को देखकर हमारे मन में जो आनंददायिनी अनुभूति होती है, उसके स्वभाव और स्वरूप का विवेचन तथा जीवन की अन्य अनुभूतियों के साथ उसका समन्वय स्थापित करना सौंदर्यशास्त्र का मुख्य उद्देश्य होता है।[3]

वस्तु के सौंदर्य का उसके रंग, रूप, रचना, आकार आदि से जितना सम्बन्ध है उससे अधिक उसका सम्बन्ध 'आनंद' अथवा 'रस' की अनुभूति से है। भारतीय सौन्दर्य-विद्या का केन्द्र रस है जैसा कि उपनिषदों में भी कहा गया है-रसौ वै सः (ब्रह्म ही रस है)।[4] सुन्दर वस्तु आनन्दप्रद होने के कारण हमारी चेतना सत्ता का अंश है हम उस वस्तु को उसके आध्यात्मिक प्रभाव से विछिन्न नहीं कर सकते। हम सुन्दर वस्तु का प्राकृतिक पदार्थ पानी और हवा की भाँति अध्ययन नहीं करते। पानी इसलिए पानी

है क्योंकि विश्लेषण द्वारा हम जानते हैं कि यह हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के विशेष संयोग से बना है। सुन्दर वस्तु केवल आकार और रचना के कारण ही सुन्दर नहीं है वरन वह इसलिए सुन्दर है क्योंकि उसका अनुभव आनन्द की अनुभूति उत्पन्न करता है। प्रत्येक रचना के सौंदर्य की अन्तिम परीक्षा हमारी अनुभूति के द्वारा ही होती है। सौन्दर्य के इस आध्यात्मिक स्वरूप की परीक्षा सौन्दर्यशास्त्र और इसके प्राकृतिक स्वभाव की गवेषणा सौन्दर्य विज्ञान का काम है।

सौन्दर्यशास्त्र सौन्दर्य की शास्त्रीय विवेचना है। सौन्दर्य से रस की उत्पत्ति एक रहस्यमयी क्रिया है और रस सौन्दर्यशास्त्र का विशिष्ट भारतीय प्रमेय है। सुप्रसिद्ध फ्रांसीसी प्राच्य विद्या विशारद लुई रेनू ने कहा है- 'भारत की प्रतिभा से ज्ञान की जितनी भी शाखाएँ उत्पन्न हुई हैं, उनमें सौन्दर्यशास्त्र जितने गहरे रूप में भारतीय है उतना और कोई नहीं।'[5] भारतीय सौन्दर्यशास्त्र की इस ठेठ भारतीयता का सबसे अधिक प्रबल प्रमाण रस-सिद्धान्त है। रस की परिकल्पना के पीछे भारतीय मनीषियों की तत्वान्वेषी वृत्ति का व्यापक परिवेश है। पदार्थों को सार तत्व के रूप में 'रस' संज्ञा का' प्रयोग भारत में आरम्भ से ही सामान्य व्यवहार एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक शाखाओं में प्रचलित रहा है। वेदों में मधु, दुग्ध, सोम, जल आदि के लिये जिस प्रकार रस शब्द का प्रयोग किया गया है, उससे स्पष्ट है कि पदार्थ-सार ही रस है। उपनिषदों में जिस प्रकार वेदों की अनेक भौतिक संकल्पनाओं को सूक्ष्म आध्यात्मिक रंग दिया गया, उसी प्रकार रस का भी आध्यात्मिक रूपान्तर हुआ। वृहदारण्यक उपनिषद में 'प्राणों वा अंगाना रसः' कहकर रस को सारभूत तत्व के में स्वीकार किया गया, तो तैतिरीय उपनिषद में स्वयं ब्रह्म को ही रस रूप कहा गया है। छांदोग्य उपनिषद में रस के 8 प्रकारों का उल्लेख किया गया है। भारतीय दर्शन की प्राचीनतम धाराओं में से सांख्य दर्शन ने रस को अपनी विचार प्रणाली में महत्वपूर्ण स्थान दिया। वात्स्यायन के कामसूत्र में भी रस शब्द प्रयुक्त हुआ है। वहाँ रस को रीति, प्रीति, राग, वेग आदि का पर्याय कहा गया है। इस आधार पर कुछ विद्वानों द्वारा यह अनुमान लगाया गया कि कामसूत्रकार वात्स्यायन के युग में ही या उसके आस-पास रस शब्द के शास्त्रीय अर्थ का आविर्भाव हो गया होगा।[6] तत्पश्चात भरतमुनि के नाट्य शास्त्र में रस की विस्तृत व्याख्या की गयी है। भरत के नाट्यशास्त्र मे रस-सिद्धान्त को जिस प्रकार व्यवस्थित किया गया है, वह विद्वानों के अनुसार तत्कालीन आयुर्वेद के अन्तर्गत विकसित रस चर्चा के सर्वथा समानान्तर है।

भरत मुनि का 'नाट्यशास्त्र' (चतुर्थ शताब्दी) ही प्राचीनतम उपलब्ध ग्रंथ है जिसमें रस-सिद्धांत का सूत्रपात हुआ है। भरत मुनि ने रस का सैद्धांतिक विवेचन करने के साथ ही अपने ढंग से काव्यशास्त्रीय रस की पूर्ववर्ती परंपरा के इतिहास के भी

संकेत दिए हैं। प्रत्येक अवधारणा के मूल के उत्सव को वेदों से संबद्ध करने की भारतीय परंपरा के सर्वथा अनुरूप ही भरत मुनि ने रस को अथर्ववेद से गृहीत माना है। इसके अतिरिक्त उन्होंने ब्रह्मा, तुंडिघ, सदाशिव भरत, ब्रह्म भरत आदि भरत, भरत वृद्ध, तण्डु, नन्दि, नन्दिकेश्वर, वासुकि, शौद्धोदनि, शिलालिन, कृशाश्व आदि पूर्ववर्ती नाट्यचार्यों एवं रसाचार्यों का ऋण स्वीकार किया है। उन्होंने यह भी लिखा है कि उनसे पूर्व रस की दो परंपराएँ प्रचलित थीं। एक थी द्रुहिण की जो आठ रस मानते थे और दूसरी वासुकि की जो शांत रस नामक नवाँ रस भी मानते थे। इन दोनों परंपराओं में स्वयं भरत मुनि ने द्रुहिण की अष्ट-रस वाली परंपरा का अपेक्षाकृत अधिक स्पष्टता के साथ निर्देश किया है। किंतु उन्होंने वासुकि की परंपरा का भी यथास्थान आधार ग्रहण किया है।

रस का विवेचन भरत ने नाट्य-रस के रूप में किया है। उनके अनुसार रस नाट्य की परिणति है, किंतु प्रयोगसिद्धि के लिए नाट्य में अन्य अनेक बातों की आवश्यकता होती है, जैसे आठ रस, उनचास भाव, चतुर्विध अभिनय, द्विविध धमी, चार वृत्तियाँ, चार प्रवृत्तियाँ, द्विविध सिद्धि, स्वर, आतोद्य, गान, संगीत तथा त्रिविध रंग आदि। मुनि के अनुसार ये सब मिलाकर नाट्य-संग्रह हैं। अपने नाट्यशास्त्र में उन्होंने यथाक्रम इन समस्त विषयों का विवरण प्रस्तुत किया है। इस विषय-सूची से भरत-कृत रस-विवेचन के व्यापक परिप्रेक्ष्य का ज्ञान होता है। नाट्यशास्त्र के अंतर्गत उन्होंने नाट्य के व्याज से नृत्य, संगीत, मंडप-रचना, चित्र आदि कलाओं की जैसी विस्तृत चर्चा की है, उससे यह निष्कर्ष निकालना अनुचित न होगा कि भरत मुनि ने संपूर्ण कलाओं के संदर्भ में रस-निरूपण किया है। सारांश यह कि भरत-निरूपित रस एक व्यापक सौंदर्यशास्त्रीय अवधारणा है।

भरत मुनि के द्वारा रस सिद्धान्त की स्थापना हो जाने के बाद स्वभावतः शास्त्र में रस चर्चा की परम्परा-सी चल पड़ी। नाट्यशास्त्र के बाद रस चर्चा के दर्शन पहले पहल जिस ग्रंथ में होते हैं वह है, भामह का काव्यालंकार जिसका रचना काल सातवीं शताब्दी के आस-पास माना जाता है। भामह ने काव्यालंकार में इस बात पर बल दिया कि काव्यचर्चा नाट्यचर्चा के अंगभूत और आनुशंगिक है और काव्यचर्चा को उन्होंने स्वतंत्र रूप दिया और परम्परा को आगे बढ़ाते हुए अलंकारों का विस्तृत विवेचन किया।[7] तत्पश्चात् दण्डी ने काव्य के सन्दर्भ में रसचर्चा की दण्डी ने भी भामा के समान हो इसको रसवद् अलंकार के रूप में देखा तथा उन्होंने भरत के समान ही विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी से परिपुष्ट स्थायी भाव को रस कहा। वामन ने भी दण्डी का अनुसरण करते हुए गुणों के आधार पर रीति के सहारे रस-चर्चा को आगे बढ़ाया। रुद्रट ने काव्य के सम्बन्ध में रचित अलंकार ग्रंथ के अन्तर्गत स्पष्ट और

विस्तृत रस विवेचन प्रस्तुत किया। 9वीं शताब्दी में आनन्द वर्धन के ध्वन्यालोक द्वारा ध्वनि की खोज के साथ रस-चिन्तन में युगान्तकारी परिवर्तन हुए। इसी क्रम में अनेकों विद्वानों अभिनव गुप्त, भट्टनायक, भोज इत्यादि ने रस का विवेचन अपने-अपने अनुसार किया। अभिनव गुप्त तो रस चिन्तन की पराकाष्ठा है। भरत के नाट्यशास्त्र पर ''अभिनव भारती'' नामक टीका लिखकर एक ओर उन्होंने नाट्य रस सम्बन्धी विवेचन को अन्तिम रूप दिया तो दूसरी ओर आन्नदवर्धन के (ध्वन्यालोक) पर लोचन नामक टीका लिखकर काव्य रससम्बन्धी चिन्तन को पूर्णता प्रदान की।

इस प्रकार निरन्तर विकास, परिष्कार और संशोधन के द्वारा रस-सिद्धान्त एक सर्वांगपूर्ण सार्वभौम सौन्दर्यशास्त्रीय सिद्धान्त रूप में प्रतिष्ठित हुआ। हम देखते हैं कि भारतीय सौन्दर्यशास्त्र को रस और भाव के माध्यम से समझाया गया। रस सौन्दर्य का परमानंद है जो कला के माध्यम से प्राप्त होता है। भारतीय सौंदर्यशास्त्र की ज्ञान मीमांसा एक बहुआयामी और गहन विचार-परम्परा है। इसमें सौन्दर्य केवल रूप नहीं, बल्कि अनुभूति, अर्थ और आनन्द का संमिलन है। यह सौन्दर्य दृष्टि आध्यात्मिक संवेदनात्मक, बौद्धिक, नैतिक तथा सांस्कृतिक सभी स्तरों पर क्रियाशील है। भारतीय सौन्दर्य-मीमांसा हमें सिखाती है कि कला का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं बल्कि चेतना का विस्तार, मन का परिष्कार और आत्मानुभूति है। भारतीय सौन्दर्य ज्ञान परम्परा मानव जीवन को सुन्दर, कल्याणकारी और में अर्थपूर्ण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

संदर्भ -

1. शर्मा, डॉ. हरद्वारी लाल, सौन्दर्यशास्त्र, इलाहाबाद, 1984, पृ. 8
2. टैरी, ईगलटन-द आइडियोलॉजी ऑफ द एस्थेटिक, टलैकवेल, ऑक्सफोर्ड, 1999
3. एडोर्नो, टी0 डब्ल्यू, एस्थेटिक थिमरी, न्यूयॉर्क, 1984
4. तैत्तिरीयपनिषद, 2/7
5. डायगेनेस (Diogenes), नं0 1 1953, पृ. 129-30
6. डॉ. नगेन्द्र, रस-सिद्धान्त, दिल्ली, पृ. 8
7. जैन, निर्मला, रस-सिद्धान्त और सौन्दर्यशास्त्र, नई दिल्ली, 1999, पृ. 22

*